कृपया यह ग्रन्थ नीचे निर्देशित तिथि के पूर्व अथवा उक्त तिथि तक वापस कर दें। विलम्ब से लौटाने पर प्रतिदिन दस पैसे विलम्ब शुल्क देना होगा।

मुमुक्षु भवन वेद वेदाङ्ग पुस्तकालय, वाराणसी।

झाँसी की रानी

वे ही पढ़ें खटकतीं जिनको
पारतन्त्र्य की घड़ियाँ !
तोड़ सकें जो मातृभूमि की
तड़-तड़-तड़-तड़.... कड़ियाँ !!

ईश्वरदत्त पाण्डेय 'श्रीश'

[साहित्यरत्न, शास्त्री, काव्यतीर्थ]
'ज्योतिष्मती'—सम्पादक
काशी।

झाँसी की रानी

[हिन्दुस्तानी भाषा में लिखी हुई एक नन्हीं सी तुकबन्दी]

प्रस्तुतकर्ता

श्रीमाधवप्रसादमिश्र 'माधव'

'माधव'मन्दिर; रानीभवानीगली

काशी।

पहला संस्करण
१०००]

१९९६

[एक प्रति का ।)

मुद्रक—

श्रीजगदीशाचार्यशास्त्री,

पद्मप्रेस, बनारस सिटी।
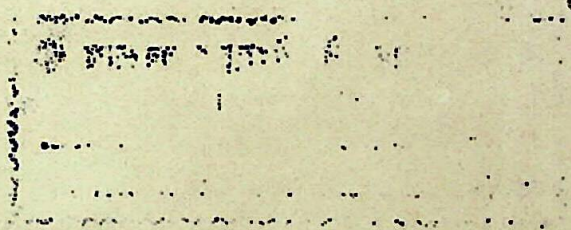
मदन मोहन मालवीय

विश्ववन्दनीय

महामना, महर्षि पं० मदनमोहनमालवीयमहाराज

की सेवा में—

देशकी धर्मकी
और समाज की
जीवित — जागृत
शान ही आप हैं !

प्रान हैं
भारत वासियों के,
शुभ—संस्कृति के
अभिमान ही आप हैं;

क्या कहें, क्या न कहें,
कहिये स्वयं
भूतल में
भगवान ही आप हैं

आपका है
उपमान कहीं नहीं !
आप तो आप
समान ही आप हैं !!

—'श्रीश'

...

क्या लिखूं ! क्या न लिखूं !!

रात-दिन तलवारों की झनझनाहट से प्रमत्त रहनेवाला भारत–महासिंह आज वन्दी है, गुलाम है, और है कुछ मुष्टिमेय अहम्मन्य सभ्यों के द्वारा पद-पद पर न्यक्कृत, लाञ्छित, ताड़ित और अपमानित ! अभागे देश के हम तीस करोड़ 'मृत-व्यक्ति' पशु-प्राय जीवन विता रहे हैं। हमारा राष्ट्र दिन दहाड़े 'मिस मेयो' जैसी अभद्रमहिलाओं द्वारा अनैतिक, व्यभिचारी करार दिया जारहा है मगर हम चूं नहीं कर सकते। हमारे यहां के वे बड़ी-बड़ी आखों वाले गजब के जवान...जो 'नश्तर' की तरह निष्ठुर थे और तलवार की तरह तेज—वे एक नहीं दो नहीं, सैकड़ो हां सैकड़ो कुत्ते की मौत मार डाले गये मगर-क्या मजाल कि आज इस देश का कोई पत्थर का टुकड़ा भी उनके नाम पर आंसू वहा सके ! राणा, शिवा, हकीकत, वन्दा, का देश इतना पतित है, इतना गया—गुजरा हो गया है यह विश्वास नहीं होता है ! कहां अतीत भारत का बलिदानी शोणित-सिंहासन कहाँ, आजका हत भाग्य, विलासी, लोलुप, क्षीण-क्षीण भारत...

किन्तु, हां विश्वास होता है, जव कि देखता हूँ भारतीय-तरुणों की मानसिक-दुर्दशा को ! ये फैशन के पुजारी 'सिनेमा' को मन्दिर समझते हैं, 'डॉन्स' को कला का चरम उत्कर्ष मानते हैं और नित्य नये-नये रंग-बिरङ्गे सजावट के सामानों से इस नश्वर शरीर को सजाते हैं। पृथिवी से आकाश तक साफ सुनाई देनेवाली, म्रिय-माण देशकी कराह पर ये कान नहीं करते, समाज के अग्निकुण्ड में प्रतिदिन तिल-तिल कर जलने वाली नई-नई वाल-विधवाओं की

दारुण-समस्या को सुलझाने में सन्नद्ध नहीं होते, बिलबिलाते बच्चे, सती-साध्वी स्त्री, जरातुरा जननी, विपद्ग्रस्त पिता...इनमें किसी की परवाह न करते, विधर्मियों के द्वारा बलपूर्वक प्रति दिन सत्तर हज़ार के करीब कुर्बान की जानेवाली निरीह गोजाति की खौफ़नाक हालत पर चूँ तक नहीं कस सकते.........भारत माता के आशावलम्ब इन तरुणों के इस रोमाञ्चकारी पतन के स्मरण-मात्र से आंखों के समाने लज्जा, घृणा, क्षोभ; का एक अम्बार सा लग जाता है !......! एक ओर हज़ारों लड़ैते लाल एक टुकड़े कपड़े और एक कण अन्न के लिये दर-दर भीख मांगते फिरते हैं दूसरी ओर तथाकथित तरुणों की टोलियां अपनी बेठाट की ठटरी को विदेशी पाउडरों आदि विलास-सामग्रियों से चमचमाने में मस्त रहती हैं-कितना वैषम्य है !—क्या नृशंसता है !

शताब्दियों से पददलित इस अभागे देश के भोले नौजवानों ? जागो ! और अपने स्वत्व को पहचानो ! अपनी जननी—जन्मभूमि की अन्तिम चीख़ को सुनो ! उसके बिखरे हुए बाल, उसके रक्त ओठ, और ज़ालिम अत्याचारियों से पूरा-पूरा प्रतिशोध चुकाने के लिये भयानकताभरी उसकी आंखों का ध्यान करो ! सैनिकों !

वज़ा कहे जिसे आलम उसे वज़ा समझो
ज़बाने—ख़ल्क को नक्क़ार-ए-ख़ुदा समझो !

जब आजकल का समाज ही ऐसा है—तो 'साहित्य' की बात क्या कही जाय ! आज हिन्दी-साहित्य के कितने कवि हैं जिनकी कृतियों में वर्तमान युग की दर्दभरी 'आह' रहती हो ! मरणोन्मुखी हिन्दू-जाति की राष्ट्रिय-भाव-हीनता आज किस कोटिमें पहुंच चुकी है, यह आजकल के अनन्त की ओर उड़ने वाले, क्षितिज के उस पार पर आंसू बहानेवाले, क्लीव-कल्प, म्रियमाण कवि क्या समझ

सकते हैं—उन्हें तो अपने सुनहले संसारके 'स्वप्न' में 'फुलझड़ियों' के साथ 'अभिसार' करने ही में कला की प्रत्यक्ष अनुभूति होती है।

हमने 'श्रीश' जी के 'प्रतापविजय' संस्कृत-काव्य का प्रकाशन किया था। उस पुस्तक के प्रकाशित होते ही संस्कृत-साहित्य में एक प्रकार का परिवर्तन सा हो गया। गोस्वामी दामोदर शास्त्री जी महाराज, महामहोपाध्याय डॉ० गङ्गानाथ झा शर्मा एम० ए० (वाइसचांसलर, इलाहाबाद यूनिवर्सिटी) जैसे चोटी के, दर्जनों विद्वानों ने मुक्तकण्ठ से उस पुस्तक की भूरि भूरि प्रशंसा की है। पुस्तक के छपते ही छपते अखिलभारतीयसंस्कृतछात्र-सम्मेलन के द्वितीय अधिवेशन में दश वर्षों के इधर प्रकाशित होने वाले संस्कृत काव्यों में उसे सर्वश्रेष्ठ स्थान मिला, फलस्वरूप इस विजयोपलक्ष्य में दियाजाने वाला ५१) रुपये का पुरस्कार 'श्रीश' जी को ही मिला। सम्मेलन में उपस्थित महामहोपाध्याय पं० गिरिधर शर्मा आदि सुप्रसिद्ध विद्वान् तो कविके द्वारा किये गये कविता-पाठ से एकदम विमुग्ध से हो गये थे। उसके बाद ही रघुनाथपुर स्टेट बिहार के द्वारा संस्कृत-रचना पर प्रति वर्ष प्रदीयमान १००) की प्रतियोगितामें भी इसी पुस्तक की विजय हुई। उसी प्रकार, मैंने 'श्रीश' जी की इस रचना का प्रकाशन भी समाज के लिये अत्युपयोगी समझ कर जनता के समक्ष प्रस्तुत कर देनेकी धृष्टता की है।

हमारा कवि बदकिस्मती से एक ऐसे गुलाम देश का नौजवान है जहाँ उसकी एक-एक हरकत पर अंकुश रखा रहता है—यह तो उसकी मस्ती है कि वह बड़ी से बड़ी विघ्न-बाधाओंको पार करता हुआ तरुणाई के तकाजे को पूरा करने में कोई कसर नहीं रखना चाहता, क्योंकि उसे अच्छी तरह मालूम है कि—

मिला जिन्हें उन्हें उफ़तादगी से मौज मिला।
खाया ठोकर है उन्होंने जो सर उठा के चले ॥

यह तो एक विचित्र बुद्धिमत्ता होगी कि यहाँ पर कवि के मित्रों, उपकारकों को धन्यवाद दिया जाय क्योंकि उनकी अपारसंख्या का स्मरण करने के साथ ही कलम अपना साहस खो बैठती है !

एक बात और, माधवी-निकुञ्ज के कोकिल की 'कुहू-कुहू' से एक ओर जहाँ रसिकों की हृत्तन्त्री झंकृत होती है वहाँ 'काँव' 'काँव' करनेवाले कुछ 'जन्तु-विशेषों' के कलेजों में 'कचोट' भी उठती है, इसी तरह कवि के कुछ ऐसे भी घनिष्ट-मित्र हैं जो नहीं चाहते कि उनके लोकोत्तर प्रभाव पर कवि का आतङ्क पड़े, फलतः वे प्रच्छन्न-रूप में कभी-कभी विरुद्ध-दृष्टि का अभिनय भी करते हैं, उन्हें क्या मालूम कि—

चन्द्रेण चारुचरितेन विकासितं सत्
सङ्कोचितं भवति किं कुमुदं तमोभिः ?

प्रिय-मित्र प्रयाग-निवासी प्रभातमिश्रके आग्रह से प्रस्तुतसंग्रह में अप्रासङ्गिक होने पर भी 'सिंह और शिकारी' रचना दे दी गई है, आशा है पाठक उसे पसन्द करेंगे। पुस्तक बड़ी शीघ्रता में छापी गई है। इसलिये असंशोधन-जन्य त्रुटियों के लिये भी क्षमा माँगना अनुचित न होगा।

रामनवमी
१९९६
भुवाली (नैनीताल)

श्री माधवप्रसाद मिश्रः

झाँसी की रानी

अनुरोध

आप पढ़े होंगे वीर-गाथायें पुरानी आज
ताजी बलिदान की कहानी, पढ़ लीजिये,
काट के कलेजे ही बिछाये हा ! गये न किन्तु
बह गई खून की रवानी पढ़ लीजिये ;

× × × ×

सहसा स्वदेश स्वाभिमानी बना आप का क्यों
कैसे जगी जाति में जवानी, पढ़ लीजिये ,
झाँसी की प्रसिद्ध महारानी की खरोशभरी
रोशभरी क्रान्ति की कहानी पढ़ लीजिये !!

आनन्दवन में 'माधव'-मंदिर
प्रथमा मधुयामिनी
१९९६ वि०

—'श्रीश'
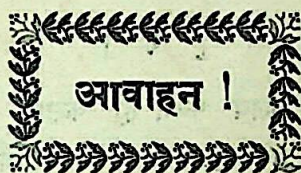
आवाहन !

[१]

त्रास क्या तुझे है पाकशासन के शासन की
जब मृग-शासन पै आसन जमाती तूं,
धमक धमक के धराधर अधीर होता
तमक तमक ज्यों तमाम तन जाती तूं;
दहल दहल उठता है दिग्गजों का दल
जब जब कुन्तल-कलाप लहराती तूं,
कोर करती है जिस ओर तूं कनीनिका की
हहर-हहर हाहाकार है मचाती तूं ॥

[२]

दीन हैं, दुखी हैं, हैं दरिद्र और द्वन्द-दुर्ग
वन्य हा ! विदेशियों के बीच में बसे हैं मां,
द्वेष-दम्भ-दावानल में हैं दिन-रात दग्ध,
दलबन्दियों के दलदल में फंसे हैं मां;
डूबे पाप-पङ्क में कलंक में कृतघ्न बने
तेरे कृपा-कणको कलेजे से कसे हैं मां,
मङ्गलमयी ! तुम्हारे भक्तों का अमंगल क्यों
फ़िर से जिलादो काल-सर्प से डंसे हैं मां !!

[३]

भीषण-भुजंगों का वलय करमें हो कसा,
एक हाथ पात्र, दूजे हाथ खड्गवाली आ,
रुद्र-मुद्रा-अंकित कुरक्त-पंक-पंकिता सी
मेद-मज्जा-मोद-मत्त मुण्डमालवाली आ;
शंकरी ! आ जगकी लयंकरी, भयंकरी ! आ
करती कठोर अट्टहास मतवाली आ,
आ री देवरंजिनी, प्रभञ्जिनी अदेवन की
'श्रीश' सर्वमंगले ! मनोज्ञे ! महाकाली आ !!

[४]

जल जाए तूल सा समूल धर्मका विरोध
ऐसी आग आज धरणी में धधकाती क्यों न,
खुल कर खून खौलता है खलमण्डल का
एरी रक्तरंजिनि ! तूं आकर अघाती क्यों न;
आती क्यों न दुष्ट-दल-दर्प दलने को देवि
खोल कर छाती, धर्म-हीनता पै छाती क्यों न,
झन-न-न''क्यों न झनकाती शस्त्र की झनक,
दन-दन दूनी दीप्ति देवि ! दनकाती क्यो न !!

[५]

छा जा वक्ष-वक्षमें समा जा अक्षि-कक्षकों में
विजयी बहादुरों में आ जा मस्त कर दे,
त्राहि-त्राहि को ही अरिमण्डली पुकारे तेज
तेज तेजवानों का समस्त अस्त कर दे;
दासता के द्रोह के दरिद्रता के मन्दिर को
एक क्षण ही में भस्मसात् ध्वस्त कर दे,
कौन कहता है सुकुमारियां कुमारियां हैं
पहले उन्हें तूं जरा खड्ग-हस्त कर दे !!

[६]

ज्वाल-माल-धारी जीते-जागते विलोचनों से
फेंक एक लूक कि समस्त लोक स्वाहा हों,
नाच उठें प्रमथ, पिशाच भूमि खांच उठें,
परम—प्रसन्नता में हूहू और हाहा हों;
एक साथ उदित सहस्रों सहस्रांशु होएं
एक साथ करतीं दिसाएं दसों हा हा हों,
खार-भरी अलकें तुम्हारी देवि ! दाहें दोष,
प्यार ! भरी पलकें तुम्हारी फिर फाहा हों !!

प्रस्तावना

(१)

भगवान ? बता दो कदा हम भी,
दुनियां में स्वतन्त्र महान होंगे,
कब देशकी धर्मकी और समाज की,
उन्नति के सुविधान होंगे;
कब बैरिकी रक्त-तरङ्गिणी के,
हम खासे तरङ्ग-निधान होंगे,
बढ़ एक से एक अनेक यहां,
कब शान—भरे बलिदान होंगे ?

(२)

सदियां नहीं बीतीं न वर्ष वीते,
अभी यारों ! कथा यह हाल की है,
सुनते ही तबीयत जाग उठे,
कुछ ऐसी ही गाथा कमाल की है;
नहीं वीर की है, नहीं धीर की है,
किसी मां के न लाड़ले लाल की है,
यह प्यारी कथा, यह न्यारी कथा,
किसी कामिनी के करवाल की है ?

(३)

जननीकी सुआशा-लता पै तुषारका,
क्यों कर था गिरा पानी सुनो,
बलिवेदिका पै जली थी किस रीति,
कराह कराह जवानी सुनो;
बलिदानकी मानकी शानकी आनकी,
जान-भरी है कहानी, सुनो;
किस रीति से देशके दुश्मनों की,
वह दुश्मन थी बनी, रानी, सुनो ॥

(४)

वह प्रेमियों के लिये फूल से भी बढ़,
कोमल और विशाल ही थी,
वह देवता थी दुखियों के लिये,
अरियों के लिये महाकाल ही थी;
वह मानती थी जिसे मानती थी,
नहीं तो फिर फेंकती जाल ही थी,
'सरकार' के वार को रोकने को,
तलवार नहीं, बस ढाल ही थी !!

(५)

उसकी बड़ी आखों में दीन-दुखी,
जनका था रसीला करार भरा,
जननी-समा भारत-भूमिके हेतु था,
प्रान से भी बढ़ प्यार भरा;
उसकी उन्हीं आखों में क्या-क्या कहूँ,
दुनियां का दुलारा दुलार भरा,
'सरकार' का था खरा 'ख़ार' भरा,
तलवार का तीव्र था 'सार' भरा !!

(६)

बलिहारी अहो ? उस कामिनी की,
जिसने इतनी पति-भक्ति किया,
किया प्रान-प्रदान भी किन्तु कभी,
पर-पक्ष में न अनुरक्ति किया;
किया तो फिर मेदिनी-भेदिनी,
अम्बर-कम्पिनी जागृत शक्ति किया !
रवि-चन्द्र भी साक्षी बने जिसके,
कुछ ऐसी स्वदेश की भक्ति किया !!

कहता हूँ, स्वदेश के भावी
तरुणों से बालों से।
जिन्हें खेलना आता है—
रण में जम कर भालों से !!

जिन्हें नाज़ है—जिन्हें अदा है
घुँघराले बालों पर,
ख़ाक बदल सकते वे तेवर—
तेग—तबर—भालों पर !!

पढ़ लें जिन्हें बुरी लगती हों
पारतन्त्र्य की घड़ियां।
तोड़ सकें जो मातृभूमि की—
तड़-तड़-तड़–तड़.....कड़ियां !!

रक्त पी गई दुश्शासन का
जिह्वा जिसकी ताती !
उसी भीम के वंशज हो—
जिसकी थी गज भर छाती !!

जिसने मां के मृदु–चरणों पर
तन मन वार दिया था !
आह ! अकेले लाखों पर जो—
लाखों वार किया था !!

कहो जानते हो उसको
जो था प्रताप कहलाता !
अरि मुगलों का, नृप चित्तौड़ का—
या दुखियों का त्राता !!

जिसने लगा दिया था जग में
वलि की वरती आगी !
कहो ज्ञात है तुमको कुछ भी—
वह 'वन्दा' वैरागी !!

आज 'शिवाजी' जैसा, बोलो
कहां वीर है बांका !
'अफजल'-उर में भिड़ा दिया था—
जिसने 'वघनख'-टाँका !!

कुंवरसिंह वह कुँवरसिंह क्या
तुमको याद नहीं है !
भूतल पर रणका मतवाला—
जिसके वाद नहीं है !!

नाश किया जिसने अरियों का
बजा बजा कर डंका !
ऐसा भीषण ऐसा भैरव—
ऐसा था रणबंका !!

है धिक्कार तुम्हें हा ! कुछ भी
होश हवाल नहीं है !
देश, धर्म, तो दूर रहे—
अपना भी ख्याल नहीं है !!

आओ तुम्हें सुना दूं अबलाकी
वह समर—कहानी !
भर दे आह तुम्हारे नस नस
में जो अमर जवानी !!

नये होश का नये जोशका
कुछ तो दिखा असर दो !
कांप उठे कातिल उसका घर—
रुण्ड-मुण्ड से भर दो !!

हाड़-मांस के घृणित-यन्त्र का
प्रेम उठा कर धर दो !
भर दो भर दो स्वतन्त्रता का—
कुण्ड रक्त से भर दो !!

स्यार तुम्हारी सीमा में
हैं घूम रहे दीवानों !
जागो कब से आह सो रहे—
सिंहों की सन्तानों !!

झनन-झनन कर झनक उठें
फिर एक बार तलवारें
'जय स्वदेश की जय स्वधर्मकी'
तीस करोड़ पुकारें !!

लेखनी से

मैं हूँ स्वतन्त्र, तूं है स्वतन्त्र
मेरी दुनियां भी है स्वतन्त्र !
फिर डर कैसा, किसका, क्यों—
उठ, दिखला दे जादू एकतन्त्र !!

झड़ वज्रपंक्ति सी, बिजली सी
बढ़, कढ़ कर हाहाकार मचा
जग पड़े आप से आप जमीं !
वीरों की वह ललकार मचा !!

रणचण्डी का आह्वान सुना,
बुन्देल—खण्ड की शान सुना !
ऐ आजादी की दीवानी ?
आजादी का ऐलान सुना !!

वीरों का हाहाकार सुना
रण-धीरों की ललकार सुना !
हो एक, अनेकों का उसने—
किस तरह किया, संहार सुना !!

कितनी विचित्र, कितनी पवित्र
कितनी सङ्गीन कहानी है !
ऐ मेरी लेखनि ! जाग-जाग—
मैंने लिखने की ठानी है !!

परिचय

झांसी की जय, रानी की जय,
जय उसकी जबर-जवानी की
जय जननी-जन्मभूमि की जय—
जय उसकी अमर-कहानी की !!

भव में साकार भवानी थी
रग रग में भरी जवानी थी !
बस एक शब्द में परिचय है—
'वह झांसी वाली रानी थी' !!

वह ठीक समय पर आई थी
जब ठन कर छिड़ी लड़ाई थी !
गर साथ दिये होते तो फिर—
दुश्मन की वहीं सफाई थी !!

उसमें था कोई यन्त्र नहीं
कोई भी था षड्यन्त्र नहीं !
बस, इतना ही वह कहती थी—
मैं हो सकती परतन्त्र नहीं !!

सदियां से सोये भारत को—
उसने ही प्रथम जगाया था!
आजादी का उन्मत्त-गान
उसने ही पहले गाया था!!

बुन्देल—खण्ड से गरज उठी
सुन कर उसकी दुनियां कांपी!
उसकी कटार ने एक कड़क में—
लाखों की गरदन नापी!!

छूरी लेकर बरछी लेकर
बचपन में थी खेला करती!
क्षण क्षण पर चमक चमक करके
तड़िता की अवहेला करती!!

'नत्थे'-पराजय

नत्थे खां की सेना ने जब
दक्षिण से धावा बोल दिया,
कुछ सुना नहीं-कुछ गुना नहीं
अमृत में विष को घोल दिया !!

झांसी के दरवाजे पर ही
तोपों की पांत बिछाया था।
उस देश-शत्रु ने दानव ने
यों अधमपना दिखलाया था ॥

सह सकी न अत्याचारों को
नत्थे खां के व्यवहारों को।
रण-प्राङ्गण में फिर निकल पड़ी—
रानी ले, घोड़ सवारों को !!

अपना सुख साज नहीं दूंगी
सर पर का ताज नहीं दूंगी।
यह कहती निकल पड़ी, रानी—
'झांसी का राज नहीं दूंगी' !!

ऐ अधम ! तुझे है पता नहीं
'यह राजपूत की झांसी है';
तलवार-धार पर बसी हुई—
टटके शोणित की प्यासी है !!

युग-युग से पूजा होती है
इसकी खूनों की धारों से।
ठनकते तवर-टनकारों से,
अरियों के हाहाकारों से !!

रक्षित है प्रबल प्रचण्डों से
गूंजा करती कोदण्डों से !!
जयकार सुना करती है यह—
बुन्देलखण्ड के खण्डों से !!

अरि के स्वागत में मान—
सहित यह देती उसको फांसी है।
ऐ यवन ! तुझे है पता नहीं
'यह राजपूत की झांसी है' !!

है तेरी कितनी बड़ी भूल,
तूं समझ रहा जिसको कि धूल।
क्षण भर में कोटि-कण्ठ कतरे—
ऐसा है वह भीषण त्रिशूल !!

तूं कर्म्म-हीन तूं धर्म-हीन
तूं देश वेश का त्यागी है।
तूं समझ रहा जिसको तृण है
ले देख भभकती आगी है !!

अरि-उर-शोणित के चखने में
यह महामृत्यु की मां सी है।
ऐ पतित ! तुझे है पता नहीं
'यह राजपूत की झांसी है' !!

क्या नगर और क्या ग्राम सत्य
है इसकी कहीं न शानी का।
है नगरी यही, नहीं रहता—
है जहाँ मान अभिमानी का !!

है ऐसा नहीं जवान जिसे
मूंछों की हो परवाह नहीं।
मां की लुटती इज्जत पर जो
करता हो कस कर आह नहीं !!

सदियों से विन्ध्य बताता है—
झांसी की उपमा झांसी है।
ऐ अधम ! तुझे है पता नहीं।
'यह राजपूत की झांसी है' !!

झांसी के एक-एक कण में
धारा है सङ्गर-तोड़ों की !!
सौ की है नहीं—हजारों की
लाखों की नहीं करोड़ों की !!

है नृत्य यहीं होता, निशंक—
होकर, नंगी तलवारों पर ।
झांसी है यही—जहाँ के शिशु
मचला करते अंगारों पर !!

गंसने आये हैं बड़े-बड़े
पर फिर भी गई न गांसी है ।
ऐ अधम ! तुझे है पता नहीं
'यह राजपूत की झांसी है' !!

तब तक कानों के परदे को
तड़काता हुआ तड़ाका सा ।
बस, एकबारगी झांसी पर—
तोपोंका हुआ धड़ाका सा !!

फिर क्या, रानीकी जय कहते
भिड़ पड़े वीर थे वीरों से।
अड़ पड़े तीर थे तीरों से।
शमशीर लड़ी शमशीरों से !!

वह बरछी लिये कटार लिये
तड़पती तेज तलवार लिये।
प्रत्यक्ष—चण्डिका सी उछली—
हुङ्कारों में संहार लिये !!

था तेग तड़क पर तड़क रहा !
करमें था कोड़ा कड़क रहा !!
आकाश चूमने क्षण क्षण पर
उसका था घोड़ा फड़क रहा !!

तड़िता ने उसको तेज दिया !
रवि ने स्वभाव खूँरेज दिया !!
था महाकाल ने महामृत्यु का—
रूप बनाकर भेज दिया !!

उसका गौरव अकलंक देख
उसका आक्रमण अशंक देख।
दल के दल अरि-दल दहल उठे
उसका भीषण आतंक देख !!

उसका जोशीला देख जंग
उसका रोशीला देख रंग।
हो गए दंग ! हो गए दंग !
जितने भी थे बैरी दबंग !!

रानी के जरा इशारे से
कर कड़क 'कड़कबिजली' कड़की।
ले—खबर लिया क्षण में उसने—
अरियों के एक-एक धड़ की !!

वह थी ही ऐसी महा—तोप—
उसके बल पर रख दिया रोप।
नत्थे की बढ़ती सेना को
बस एकबारगी दिया छोप !!

वह धांय धांय की मची धूम,
अरि का दल का दल लिया चूम;
पीछे भगने की जगह न थी
वैरी गिरते थे झूम—झूम !!

रण रुण्ड—मुण्ड से पाट दिया
लोहू—लुहान का ठाट किया।
अरि—हाथ उठा का उठा रहा—
इस बीच, बीच से छांट दिया !!

घनघोर दहाड़ मचाती थी
लेकर पहाड़ टकराती थी।
काली सी पीती रक्त, मांस को—
खाती, हाड़ चबाती थी !!

क्या गजब तोप थी नागिन सी
क्षण भरमें मचवा दिया कहर।
अरियों के कण्ठ—कलेजे पर—
लहराती थी वह लहर—लहर !!

घोड़े बन करके अन्ध गिरे !
हो मन्द विशाल गयन्द गिरे !!
गोले के गिरते—गिरते ही
अरियों के कोटि कबन्ध गिरे !!

सम्बन्ध शीघ्र ही छोड़ दिया,
दम भर ही में दम तोड़ दिया।
थी तड़प-तड़प उठती लाशें
जिस तरफ तोप को मोड़ दिया !!

यह तीर नहीं, तलवार नहीं,
यह तड़क नहीं बिजली की है !!
भागो भागो का मचा शोर
यह कड़क 'कड़कबिजली' की है !!

कोई विलोक गनगना उठे !
कोई तन से तनतना उठे !!
यह दानवता का ठाट देख !
बैरी-बैरी बनबना उठे !!

लेकर कटार फिर चढ़ आई
देखो विजली सी बढ़ आई;
मत रुको अरे भागो फिरसे—
झांसीकी रानी चढ़ आई !!

सुनते ही इतना 'नत्थेखां'—
ले करके अपनी जान भगा;
बदला लेने को कौन कहे
तज कर सारा सामान भगा !!
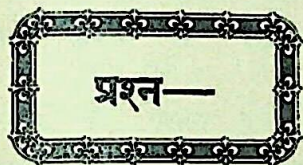
थी तेईस मार्च वह भीषण
वह सत्तावन सन था।
बरस रहा सा भारत पर जब
कोटि-धार दुख-घन था !!

"—सर 'ह्यूरोज' आज झांसी पर
करने वार चले थे।
साथ स-शस्त्र सिपाही
उनके साठ हजार चले थे !!

ऐसी उनके साथ-साथ थीं
महा भयानक तोपें।
एक धड़ाके में जो पृथ्वी
सहित गगन को तोपें !!

बरछी चमक रही थीं चमचम
पृष्ठ-स्थान किसी के।
भाले भभक रहे थे करमें
कटि में किर्च किसी के !!

तीर लिये था तेग लिये था
लिये तबर था कोई।
झन झन करती लिये हुए
तलवार तमकता कोई !!

किसको मारें किसको काटें
किसका खून बहा दें।
किसके रुण्ड मुण्ड की माला
भैरव को पहना दें !!

घोड़-सवार इस तरह कहते
एक—एक से तगड़े।
चलं जा रहे भृकुटि तानके
वत्त कवच से जकड़े॥

पल्टन की पल्टन गोरों ने
अपनी खड़ी किया था।
विद्रोही दल की लाशों की
कर फुलझड़ी दिया था॥

चारों तरफ दीन दुनियां में
हाहाकार मचा था।
नारकीय—कृत्यों से उनके
रौरव—नरक तचा था॥

दुराग्रही गोरों ने अपना
कालापन दिखलाया।
शमन शमन की धूम मचाकर
दमन रूप दिखलाया॥

गोलों गोली के ऊंचे से
ऊंचे व्यूह बने थे।
झांसी-कान्ति ग्रस्त करने या
राहु—समूह तने थे॥

"—गर तुम हो करके अशक्त ही
यहां चली आओगी।
झासीको दे दोगी तो फिर
दशा भली पा ओगी॥

इधर-उधर गर जरा किया—
तो, देखो, भय न करूँगा!
दमन करूंगा, दमन करूंगा,
झांसी—विजय करूँगा !!—"
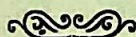
हठी अहद ! 'ह्यूरोज' का हुआ
ऐसा प्रश्न विकट-तम ।
उत्तर मिला उसे रानी के द्वारा—
पुनः प्रकट—तम ॥

"—कह दो, कह दो, नहीं मिलेगी,
नहीं मिलेगी फांसी !
हां, मिल सकती है तब जब कि,
मुझे मिलेगी फांसी !!

नहीं मिलेगी—नहीं मिलेगी
झांसी भी तो तव तक।
एक रोम में एक विन्दु भी—
रक्त रहेगा जव तक !!

कोटि-कोटि मस्तक वीरों के
झुकते जिसके आगे।
उसे कैद या उसे वन्दिनी—
करने चले अभागे !!

आग लगा कर गर न करूँ मैं
तेरी क्षार जवानी।
दासी कहना, फिर न भूल कर—
मुझको कहना रानी !!

दले द्रोहियों के दल का दल
वह हुँकार मचा दूं।
चाहूं जिधर उधर दम भर में—
हा-हा-कार मचा दूं !!

लिया वीर व्रत की दीक्षा
फिर कायरता करना क्या।
अमर-जाति में जन्म लिया—
फिर मरने से डरना क्या !!

भले न मैं अपनी झांसी का
सर पर ताज रखूंगी।
इससे क्या जननी की लुटती—
मिटती लाज रखूंगी !!

जन्मभूमि के हेतु जिसे
आता है मरना—जीना।
जिसे कटाना आता है—
हंसते ही हंसते सीना॥

दुश्मन के आगे जिसका सर
कभी नहीं झुकने को।
जो समुद्र आगे पाकर भी—
कभी नहीं रुकने को !!

वही देश है भारत मेरा
कहो अ-मन्त्र रहे वस।
एक तन्त्र है धर्म्म हमारा—
देश स्वतन्त्र रहे वस!!

कहो, विछा देगी वीरों का
शव-शोणित भू भर पर।
मगर नमा न कभी सकती है
'झांसी की रानी' सर!!

कहो फिरंगी! फिर न रहेगी
तेरी जरा निशानी।
यदि मेरी उठ पड़ी भयङ्कर—
तम तलवार पुरानी!!

झांसी यह झांसी मेरी है
मैं झांसी की रानी।
जो विरुद्ध इसके उसकी—
रह सकती नहीं निशानी!!

अब तक नहीं कृपाण हमारी
हो कठोर चमकी है।
इसी लिये क्या कुटिल—
फिरंगी की धमकी धमकी है !!

कह दो, अभी नहीं देखा है
भूतल-मध्य भवानी !
शीघ्र दिखा दूंगी अब—
तुझको अरे मूढ़ ! ओ मानी !!

चमकें एक साथ लाखों रवि
ऐसी ज्योति जगा दूं।
प्रलय-प्रलय की हो पुकार
कुछ ऐसी आग लगा दूं !!

'लक्ष्मी' नाम किन्तु काली हूँ
जिसे देख भी दूंगी।
बच न सकेगी उसकी बोटी,—
खड़े खून पी लूंगी !!

मौत खेल जायेगी खुद ही
उसके सर पर तब तक।
मेरी बंक भृकुटि फड़केगी—
जिसके ऊपर जब तक !!

जब तक रवि है, जब तक शशि है,
जब तक है ध्रुव-तारा।
कौन मिटा सकता है कह दो—
यह आतङ्क हमारा !!

महासमर
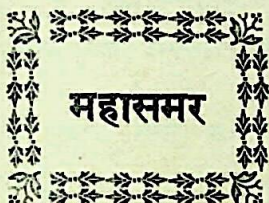
है मजा चखाना आज उन्हें।
बुन्देलों की शमशीरों का ॥
है उनको आज बताना यह
बुन्देल—खण्ड है वीरों का।

चाहे मत गौरव-खान बचे
चाहे मत अपनी जान बचे ।
पर याद रहे बुन्देलों के
बुन्देल—खण्ड की शान बचे ॥

बतला दो बीर यहीं हैं जो
कटते कटते भी हँसते हैं।
यह वही देश है, वही देश
नर-सिंह जहाँ पर बसते हैं॥

बुन्देल—खण्ड के अञ्चल को
निज कटे सरों से भर देना।
पर परतन्त्रता—पिशाची को
मत अपने घर में घर देना !!

अरियों के आततायियों के
सर पर बन गोले नाच उठो।
अरिमण्डल पर निश्शङ्क आज—
बनकर के शोले खांच उठो॥

चाहे उनका क्षय हो, कि न हो
चाहे उनका जय हो, कि न हो।
पर याद रहे, हटना न जरा—
चाहे उनकी भय हो कि न हो॥

जय 'हर हर महादेव' की फिर
बस एक वार ललकार उठी।
सेना में सैनिक—मण्डल में
इस तरह विकट जयकार उठी—

बोलो 'झांसी रानी की जय'
उसके वर वाहु—दण्ड की जय।
बुन्देलों की इस मातृ-भूमि
प्यारे 'बुन्देल-खण्ड की जय'॥

यम की भी हो परवाह नहीं,
जब तक प्राणों में प्राण रहे,
लड़ते रहना, भिड़ते रहना—
जब तक कर-मध्य कृपाण रहे !!

"—यह तन, यह मन, यह धन,
यह जीवन, सब कुछ तुझे समर्पण है
तेरे चरणों पर मां ! अब तो—
सर्वस्व हमारा अर्पण है"॥

रानी के लाल-भाल पर फिर
था लाल-लाल चन्दन झलका।
कुछ पता नहीं जल था कि रक्त—
फिर लाल-लाल आँसू ढलका !!

हाथों में निर्मित सोने का
रण कंकण था झनझना' ' 'उठा।
फिर कवच कसा, उठ गया खड्ग
फिर रोम-रोम तन-तना उठा॥

फिर, एक बारगी चमक उठा
सर पर जो मुकुट कि था ताजा।
मारो काटो का स्वर लेकर—
भीषण बाजा 'मारू' बाजा॥

त्यौरियां तन गईं, ताव जगा,
रानी का कुटिल प्रभाव जगा।
झांसी के बच्चे-बच्चे में—
बदला लेने का भाव जगा॥

कल तक जो कुण्ठित होते थे
नाचों पर नवल-नवेली पर।
देखो रण में वे निकल पड़े—
लेकर के जान हथेली पर!!

हा! गरनाली तोपें तब तक
गरगरा उठीं अंगरेजों की।
क्षण भर में पातें सजीं आह—
तड़पते जनों के भेजों की॥

तोरण सा क्षण में सजा दिया
सड़कों पर नंगे नेजों को।
चुन दिया आह! उन पर—
शिशुओंके 'टहटह' लाल कलेजों को

जीवन में पहली हार देख
आतङ्क—कारिणी मार देख।
रानी ने ऊँचा खड्ग किया—
दुखियों का हाहाकार देख॥

ले रोश 'गोश खां' व्याकुल सा
फिर होकर बेअन्दाज उठा।
रण भर में भीषण शोर मचा—
घनगर्जी गोलन्दाज उठा ॥

घन सी गरजी 'घनगर्ज' तोप
रख दिया हाथ जब हलका सा !!
लाखों लाश लुढ़कने लगीं—
रण में मच गया तहलका सा !!

तर बतर ज़मी को सींच दिया
उस महातोप ने अजब किया।
लाखों ज़बान पर एक शब्द था—
गज़ब किया ! बस गज़ब किया !!

तब तक बिजली सी छूट पड़ी
हो महामृत्यु भी झूठ पड़ी।
रानी ही स्वयं विपत्ती पर—
ले रूप बाज का टूट पड़ी !!

काली सी धर विकराल रूप
बन कर सङ्गर-मतवाली सी।
दाएँ, बाएँ, निश्शङ्क बनी—
करती थी काट भुजाली सी !!

तूं गदा भूल, गाण्डीव भूल,
मतवाले भारत ? वज्र भूल।
पर रानी के इस साहस पर—
बरसा-बरसा दे अश्रुफूल !!

किस तरफ गई, किस ओर गई
कोई सकता था बता नहीं।
जो पता लगाने चला आह—
तब तक खुद उसका पता नहीं ।।

क्षण में उड़ गई कटारों पर
क्षण में तड़पी तलवारों पर।
ललकार बाँध, फिर पहुंच गई—
झन-झन करते हथियारों पर !!

थी कभी मचाती ताण्डव सी
नंगे नेजों की नोकों पर।
थी कभी भभकती भीषण से—
भीषण तोपों की झोकों पर !!

ऐसा मारा तलवार तड़प
अरिका सर नभ तक उछल गया।
यह हाहाकारी दृश्य देख—
मन महाकाल का मचल गया !!

विप्लव का भीषण-काण्ड देख
अंगरेजों को अब बूझ पड़ा।
'ह्यूरोज' जान की बाजी ले—
आगे बढ़कर फिर जूझ पड़ा ।।

"यह महासमर है महासमर
इसको सर देकर कर दो सर।
यह सभी जानते हैं जग में—
कोई न अजर कोई न अमर ।।

वीरों ! कटि कर साज रखो
अपने आने की लाज रखो।
इक नारी द्वारा डूब रहा—
मेरा है कीर्ति-जहाज रखो॥

जो काम न आए मौके पर
वह तो कोई अभिमान नहीं।
जो आन-बान पर मर न मिटे
वह तो कोई इनसान नहीं" !!

फिर तो बढ़ने ही लगा 'श्रीश'
वह घमासान यों क्षण-क्षण में
है चिह्न आज तक जिसका कि—
बुन्देल-खण्ड के कण-कण में !!

फिर तीर चली तलवार चली
झन झन कर कुटिल कटार चली।
फिर एक वार कर धांय धांय—
गोलों की भी भरमार चली !!

रानी तब तक घोड़े पर चढ़
आगे बढ़ कर ललकार उठी।
मानों रणचण्डी आप रूप—
रण में कर हाहाकार उठी !!

"ऐ खुदाबक्स" ? अब क्या होगा
आफ़त के बादल घिर आये।
जो विजय-चिह्न आगे थे वे—
देखो फिर से हैं फिर आये;"

रानी के यों कहते उसने
फिर नालदार को थाम लिया।
या आसमान से उतर उसे—
बिजली ने कड़क सलाम किया !!

वह विकराला बन धांय धांय
कर रही तोप थी 'नालदार',
जिससे आतङ्कित ढुलक पड़े—
सैकड़ों हठीले एकबार ॥

हिल गए कलेजे, गूंज उठी
आवाज 'भवानी शंकर' की।
सचमुच वन गई महाराणा में—
प्रतिमूर्ति भवानी शंकर की !!

फिर तो अरिदल आगया आह
गोलों के विकट सपाटे में।
क्षण भर के लिये हुई दुनियां—
थर थर करती सन्नाटे में !!

फिर तो ऐसा था घमासान
साक्षी जिसका है आसमान।
जिसमें स्वतन्त्रता के बदले—
दे दिया देश ने रक्तदान ॥

मुझमें स्वतन्त्रता भक्ति नहीं
उतनी स्वधर्म अनुरक्ति नहीं।
लिखता डंके की चोट किन्तु—
अफसोस कि मुझमें शक्ति नहीं ॥
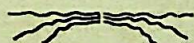
रानी का घोड़ा

जैसी झांसी की रानी थी
वैसा ही अश्व निराला था।
वह भी सांचे में ढाली थी—
वह भी सांचे में ढाला था॥

क्या कहें, देख उसका सरपट
कैसा वैरी दुख-सुख चखते।
सबने जब घुटने टेक दिये—
रण-मध्य कदम रखते रखते!!

अपना बचाव करते करते
उड़ गये शत्रु परते परते
उस रणरंगीले घोड़े के—
रण-मध्य कदम धरते धरते ॥

क्या कहूँ और मैं क्या न कहूँ,
कितना भीषण वह घोड़ा है।
जो कुछ कह चुका, कहूँगा, जो—
कहता हूँ, सब कुछ थोड़ा है ॥

चलता था भीषण शोला सा
फिर गिरता था बमगोला सा!
रानी को ले फिर बेहिसाब—
उड़ता था उड़न-खटोला सा !!

तलवार छिप गई म्यानों में
फिर अरि का कौन ठिकाना था!
वह शब्द नहीं जो प्रकट करे—
घोड़ा कितना मरदाना था !!

कितना निष्ठुर कितना नृशंस
घोड़े का था वह अंश-अंश !
रानी जब तक अरि-ओर झुके
तब तक उसने कर दिया ध्वंस !!

आगे जो वढ़ा किया साहस
उसको फिर वहीं लताड़ दिया !
जो पीछे पड़ा दिया झटका—
पटका फिर वही पछाड़ दिया !!

यद्यपि समीर भी है अधीर
फिर भी उसमें वह धाक कहाँ !
अब भी वह खोज रहा ही है—
उसके चरणों की खाक कहाँ !!

पहिले करके निष्ठुर—निनाद
गोलों का भरना छेंक दिया !
फिर हो अचूक यों टाप दिया—
कोसों तक तोपें फेंक दिया !!

तत्तक सा जब फुफकार मार
ताना घोड़े ने वत्त-कत्त !
मदमत्त मतंग लगे गिरने—
होकर के टुकड़े लत्त-लत्त !!

दलके दल अरिदल हहर उठे
जिस तरफ अश्व था झूम गया !
लौहों से अरिके प्राणों को—
चुम्बक बन करके चूम गया !!

वह अश्व-रूप में ढाला था !
पर आफत का परकाला था !
चलता-फिरता उड़ता सजीव—
वह महाकाल का भाला था !!

कितने कृपाण, कितनेक बाण
झपटे उस पर थी थाह नहीं !
उड़ रहा गगन में घोड़ा था—
उसको कुछ थी परवाह नहीं !!

झुक गई कतार कृपाणों की
रुक गई झड़ी भी बाणों की !
बाजी सी थी लग गई अहा—
बाजी की गति से प्राणों की !!

थी तड़प नहीं, थी सिसक नहीं
पर अरि हो गया कवल यमका !
थी क्या मजाल कोई ठहरे—
जिस तरफ जरा घोड़ा चमका !!

वह वायु-वेग से भी बढ़कर
कोसों पर टाप कि देता था !
करने को होड़ पवन को भी—
या खुली चुनौती देता था !!

अरि झुलस गया जिस पर
झपटा, वह हव्यवाहकी ज्वालासा !
वह उठ न सका जिसके उर में—
गड़ गया खड्ग सा भाला सा !!

जब तक हाथी चिंग्घाड़ चले
तब तक सर पर वह छटक गया !
मुर्दा होकर पिलवान गिरा—
यों लक्ष्य बांधकर पटक गया !!

वह एक—एक सिसकारी पर
था बहा रक्तकी धार रहा !
अड़ गया देधड़क जिधर उधर—
बाजी पर बाजी मार रहा !!

यद्यपि अरि साठ हजार रहे
कर तथा वार पर वार रहे !
क्या गजब कि लोहा लेने को—
फिर भी घोड़ा तैयार रहे !!

यह बात सत्य है महासत्य
यद्यपि लग रही कहानी सी।
वह महासिंह सा घोड़ा था—
रानी थी चढ़ी भवानी सी ॥

गोला दग गया बजा डङ्का
मच गया युद्ध में अहतङ्का !
आ पहुँचा फिर तो नर-व्याघ्र
तांत्या टोपे सा रणवङ्का ॥

भीषण रण-गर्जन शुरू हुआ
तांत्या टोपे का एकवार।
फिर उतर पड़े झनझन करते—
रण में सैनिक पन्द्रह हजार !!

फिर शोर हुआ घन-घोर वहाँ
भीषणतम तीव्र नगाड़ों का !
पन्द्रह हजार मतवालों की—
अम्बर-भेदिनी दहाड़ों का !!

कुछ लिये सिरोही, शेल लिये,
कोई भाला चटकाता था।
कोई लेकर के कड़ाबीन—
या बरछी लिये चलाता था !!

पाकर के उनको वेग बढ़ा
रानी का रण-ताण्डव में त्यों।
पाकर पाण्डव का तेज, आग—
लपलपा उठी खाण्डव में ज्यों !!

हेकड़ी भरे अंगरेजों ने
फिर बोल दिया वे-लाग 'विजन'।
इनके इक-इक गोले का था—
प्रामाणिक पैंसठ सेर वजन !!

झांसी के गढ़ के अन्दर जो
बारूद—भरा तहखाना था।
देखते देखते गोलों का—
वह भी बन गया निशाना था !!

थीं गगन—चुम्बिनी दीवालें
उनका भी साहस छूट पड़ा !
ऐसा भीषण गोला उन पर—
कर अट्टहास बस टूट पड़ा !!

था श्री गणेशजी का मन्दिर
सुन्दर से सुन्दर, धूर हुआ
शीशे का आलीशान महल
क्षण भरमें चकना चूर हुआ ॥

झांसी में क्षण भरमें नदियां
शोणित की लहरीं लहर-लहर।
'यूनियन जैक' भी आसमान पर—
फहर उठा फिर फहर फहर !!
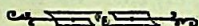
झांसी की रानी
की तलवार ।

"जीवन-धन ने तुझको अपना
जीवन—आधार बनाया था,
शोणित—निर्झर में डुवा—डुवा
तुझको खरधार तनाया था ॥

तुझमें द्विज का संस्कार भरा
तुझमें क्षत्रिय—हुङ्कार भरा
है वैश्य जातिका प्यार भरा
शूद्रों का भी उपकार भरा

मेरी तलवार उड़ेगी अब
ऐ प्रबल-पवन ! तुम रुक जाओ,
मेरी तलवार उठेगी अब
ऐ उच्च-गगन ! तुम झुक जाओ !!"

कहते-कहते सहसा रग-रग में
वीर-भाव सा भर आया !
चम चम करती तलवार बढ़ी—
आँखों में खून उतर आया !!

बाहर मियान से होते ही
आतङ्क जमाया कण-कण में !
दूना, तिगुना, चौगुना, वेग—
धरती जाती थी क्षण-क्षण में !!

तनते ही बस तनते उसके
रणभूमि रक्त से नहा उठी !
अब तक जो सूख रही, वह—
शोणित-सरिता लहलहा उठी !!

थी कौन शक्ति जो रोक सके
तलवार-धार जब मचल गई !
उफ़ करने जब तक लगे शत्रु—
तब तक लेकर सर उछल गई !!

मच गई त्राहि औ, छटक उठी
असि से चिनगारी छूट-छूट !
वह उठे दहकते भूतल से—
शोणित के झरने फूट-फूट !!

जिसका न प्राण तड़फड़ा उठे
कोई सैनिक ऐसा न बचा !
झड़ पड़े शस्त्र अरि-करसे खुद—
यों हड़कम्पी तूफान मचा !!

वह खुली चुनौती देती थी
जिसको भिड़ना हो भिड़ जाए !
किस दिन को ताकत बची रहे—
जिसको लड़ना हो लड़ जाए !!

पाकर समक्ष में किस अरिका
कर दिया कलेजा चाक नहीं !
मानों कहती थी घूम-घूम—
मैं हूँ तलवार मजाक नहीं !!

वह वज्र-सरीखी कभी प्राण
अरिका लेने उत्तान गिरी
वह कभी वैरि-उर पर सहसा—
वह सौ मन की चट्टान गिरी !!

स्वच्छन्द गगन गन्-गन् काँपा
थर-थर करती भू डोल उठी, !
झाँसी के कण-कण की ताकत—
यों खड्ग-रूप में बोल उठी !!

दम में दबदबा मचा ऐसा
दल की दल सेना दहल गई !
फिर हो अलक्ष्य रण से, रानी—
घोड़े पर चढ़कर निकल गई !!

दीवानी तूफानी निकली
बन कर रण-अभिमानी निकली
ज्वालामय की ज्वाला लेकर
वह शेर बबर रानी निकली

सखियों का दल जङ्गी लेकर
शमशेर प्रबल नङ्गी लेकर
निकली रानी अति बिमल पुत्र
'दामोदर' सा रङ्गी लेकर

था अङ्ग ओज से जड़ा हुआ
दामोदर कर में पड़ा हुआ
मन था उमङ्ग में मढ़ा हुआ
साहस था रग रग अड़ा हुआ

था श्वास-श्वास से निकल रहा
मैं हो सकती परतन्त्र नहीं
जीते-जी इस नश्वर-शरीर पर
हो सकता षड्यन्त्र नहीं

रानी को ले करके घोड़ा
देखो—देखो बे-चोट गया !
'ह्यूरोज' अहह ! इतना सुनकर—
पृथ्वी पर रोकर लोट गया !!

उफ़ ! आह ! अचानक कहाँ गई
आश्चर्य ! अरे ! किस ओर गई !
यदि वह न मिली तो कुछ न मिला
पकड़ो ! करके बेज़ोर गई !!

सैनिक दौड़े, हाकर दौड़े
बेजोड़ शपथ खाकर दौड़े
रानी का पीछा करने को
फिर 'लेफ्टिनेन्ट' वाकर दौड़े

आगे-आगे 'वाकर' चलते
पीछे से सैनिक भार-भार
रानी को घायल करने को
बन्दूकें थीं सबकी तयार

रानी ने ऐसा दृश्य देख
आवेश भरा झपटा खाकर !
ऐसा मारा तलवार तड़प—
'वाकर' गिर गया कि मुँह बाकर !!

युग-युग से वह निर्बन्ध-हीन
दौड़ी जाती अरमान लिये; !
पीछे-पीछे थे लगे हुए—
सैनिक यम का आह्वान लिये !!

भारत-अतीत के स्वर्ण-दिवस
की अन्तिम वह झांकी निकली !
डर उठे मौत लखके जिसको—
वह मूर्ति विकट बांकी निकली !!

भारत भविष्य का ओज-वीज
उस दिन सुन्दर निश्शेष हुआ !
नभ के अति-उच्च कलेजे पर—
आशङ्कित भाग्य-दिनेश हुआ !!

इस तरह दौड़े ड्रघ ने की
जाना न नदी नद और झील
बस एक दिवस में जा पहुंचा
बेधड़क 'एक सौ बीस' मील !!

यह महाविजय है महाविजय
जीते जी प्रण देने न दिया !
ख़तरे की सी तलवार बनी—
अरि को कि चैन लेने न दिया !!

भारत ! अब तूँ बतला, तेरी
जननी अब और सहेगी क्या !
कवि की है कलम रुकी कब से—
अब भी यह रुकी रहेगी क्या !!

शोक—सिन्धुमें जीवन-तरणी
डूब रही है खे, दे।
अब चलती हूँ मेरी झांसी ?
मुझे विदा तूं देदे ॥

सोते उठते और बैठते
तेरा ध्यान किया था।
तन, मन, जीवन, धन, सब—
कुछ तुझ पर कुरबान किया था ॥

फिर भी आजादी तुझको मैं
नहीं दे सकी झांसी।
हाय ! रह गई छाती मेरी—
प्यासी ही की प्यासी !!

यही जानती थी, गङ्गा
बहती है और बहेगी।
यों ही झांसी की रानी—
रहती है और रहेगी॥

मुण्डमालिनी थी तूँ काली
मैं थी तेरी माला।
तूँ प्रलयाग्नि बनी उसकी मैं—
प्रलयङ्कर थी ज्वाला;

कह देगा साक्षी मेरा जो
अम्बर अजर-अमर है।
तेरी सेवा में मैंने—
यदि कुछ भी रखा कसर है॥

अश्वारूढ़, लगाम दांतसे
पकड़े देती घुड़की।
दोनों हाथों शस्त्र लिये—
जब फिरती फड़की, फड़की!!

गरज-गरज उठता था नभ
कंपती थी थर-थर धरती।
समरभूमि में महाकाल को—
अहह! मात थी करती

नहीं रुक सकी, क्षण भर भी
सुन करके यह रणभेरी।
बोल उठी, झांसीकी हूँ मैं—
यह झांसी है मेरी!!

मुझे काटने की कढ़ती थीं
विषसे बुझीं कटारें।
एक साथ ही चलती थीं—
नङ्गी सौ-सौ तलवारें!!

उछल अचानक काट लिया
करती थी अरिका सर मैं।
एक नहीं, दो नहीं, सैकड़ों—
सर कर चुकी समर मैं॥

और किया जंगे मैदां को
खूंसे से खूब तर-बतर।
किन्तु न जाने, मम अमृत में—
किसने दिया जहर भर !!

तेरी मुनिया, तेरी बिटिया
फिर तेरी यह रानी।
कर प्रणाम तुझको चलती है—
अब न सुनेगी बानी ।।

शोक यही है तुमको
फिरसे हाय ! न देख सकूँगी।
हर्ष यही है पारतन्त्र्य का—
रूप न लेख सकूँगी !!

कालहस्त से ध्वस्त की गई
हा ? अधखिली कलीसी।
गरज-तड़प कर अल्पकाल में
चली आज बिजली सी !!

तुझको मैंने बचपन के
बदले है दिया जवानी।
तूं भी मुझे विदा दे, दे—
ऐ मेरी नगरि ? निशानी ॥

दुखियोंको सुख, निधनोंको धन
अब तक पूर्ण दिया है।
प्रेम परिजनोंको, अरियोंको—
चूर्ण-विचूर्ण किया है ॥

जल! थल! अनल! अनिल! नभ!
आओ, आज तुम्हारी बारी।
कुछ, बस नहीं बुझा दो जीवन—
मैं हो चुकी तुम्हारी !!

विदा !

झांसी के निमल विहार ! विदा
प्राणों से प्यारे प्यार ! विदा।
ऐ जन्मभूमिको आजादी—
देनेवाले इकरार विदा॥

अरिदल से लड़ने-भिड़ने में
ऐ 'कभी नहीं इनकार' ! विदा।
ऐ स्वतन्त्रता के सुन्दर से—
सुन्दर मेरे सुविचार ! विदा॥

हुंकार विदा ! जयकार ! विदा
ऐ रण के हाहाकार ! विदा।
दुश्मन का मद हरने वाली—
ऐ महाभीम ललकार ! विदा॥

बुन्देलखण्ड के खण्ड-खण्ड
होनेवाले संसार ! विदा।
ऐ तरुण-वेतवा के तटकी
इठलाती कठिन बयार ! विदा॥

ऐ वय वसन्त के मधुबन में
पहले मधुमय गुञ्जार विदा।
फिर आज काल्पनिक नहीं, सत्य ही
उपवन के पतझार! विदा॥

प्राणों में मद करनेवाले
ओ यौवन के मधुभार! विदा।
फिर अन्त समय ऐ महामृत्यु!
तेरा यह कुटिल प्रहार! विदा॥

मैं चली आज! 'ओ दामोदर'
ओ सुत! ओ प्राणाधार! विदा।
मेरी दुनिया के एकमात्र तुम—
थे सुखमय सम्भार! विदा!!

अरि के सीने में पैठ उसे
करने वाली लाचार विदा।
ताजे शोणित में छपक २
चलने वाली तलवार! विदा॥

ऐ देश? ऐ भरतभूमि! ऐ प्रिय–
स्वतन्त्रता आकार! विदा।
कहती–कहती होगई, स्वयं—
वह स्वतन्त्रता–साकार विदा!!

निर्वाण

सदियों पर फिर जनी पद्मिनी
पुनः तेज का भान हुआ
स्वतन्त्रता की वेदी पर सदियों पर
फिर बलिदान हुआ—

मान हुआ सदियों पर मां का
बांका फिर अभिमान हुआ
युग-युग तक गाने लायक
गौरव का नव-उत्थान हुआ

एक ओर था ताज
दूसरी ओर खड़ा अपमान हुआ।
धन्य किन्तु रानी! तुझको कि—
मातृभूमिका ध्यान हुआ ॥

ताज लुटा, बिक गया राज
सब कुछ सूना-सुनसान हुआ
पर किसी तरह अत्याचारी का
स्वीकृत नहीं गुमान हुआ;

धर्म देश है, कर्म देश है
यह उसका आह्वान हुआ,
अहो स्वप्न में भी उसको क्या
अपने सुख का ध्यान हुआ!

जागो !

रानी के भीषण प्रण जागो।
ओ बुन्देलों के रण ! जागो।
बलिपन्थी हाहाकार भरी—
झाँसी के ऐ कण-कण ! जागो !!

रग रग में है अब भी कृपान,
अब भी तेरे कर में कृपान।
ओ वीरप्रसविनी वीरभूमि !
फिर से तूं हो जा सावधान !!

चिरताड़ित अपमानों ! जागो
आकृतिमय वलिदानों ! जागो !
साहस का कवच पहन कर नर—
सिंहों की सन्तानों ! जागो !!

रोषिणी वेतवा के तट की
अम्बर-भेदिनी पुकार सुनो।
मां है विपदा में पड़ी हुई—
उसका कुछ हा हा कार सुनो !!

वस आग गिरा दो आज
कातरतामयी उमङ्गों पर।
विखरा दो आज कलेजे को
रण की उत्ताल-तरङ्गों पर !!

ओ अपराजित बुन्देल खण्ड !
ओ नगराजित बुन्देल खण्ड।
वस, एक बार ही फड़का दो—
निज खड्गविराजित बाहु दण्ड !!

सिंह और शिकारी

वन में शिकारी के चमक उठे नेत्र-युग
क्योंकि उसको मिला शिकार अनुमाने पर,
सो रहा था कुंज में अभय होके सिंह एक
रख कर पांव लतिका के पायताने पर,
फिर क्या था, शर छोड़ा उसने कलेजे पर
मिल गया शर जाके खून में निशाने पर,
उसके प्रथम प्रतीकार सिंह से न हुआ
जानता नहीं था वह जान तुली जाने पर !!

घायल मृगेश पिंजड़े में पहिनाया गया
भोजन दिया गया था निपट अनारी से,
गरज-गरज उठता था लौह-पिंजरे में
आँख अड़ जाती यदि पशु वनचारी से;
दूसरे के वल से गृहीत, मृत मांस खाके—
ऊव सा गया था मृगराज, अपकारी से,
तव एक दिन करुणा में डूव आंसू वहा
ऐसा कहने सा लगा वचन शिकारी से !!

कौन सी घड़ी थी दुखदायिनी शिकारी ! जब
हम उस कुंज में विहार करने चले,
हमने बिगाड़ा था तुम्हारा क्या कहो जो तुम्हें
मन्द-मन्दवाही मेरे प्राण हरने चले

कह दो शिकारी वन-मध्य सिंहनाद कर
आह ! हम तुम्हें कब वार करने चले ?
सुख निंदिया के पलने में झूमते हुए से
मुझ दुखियाका जो शिकार करने चले !!

फिर कुछ ख्याल कर क्रुद्ध होके बोला सिंह
मौत का था नाम सुना करता कहानी में
मस्त रहता था मनमानी में सदैव 'श्रीश'
भक्ति रखता था तन मन से भवानी में

फाड़ा करती थी गरवीली गजमण्डली को
ऐसी शक्ति रखता था नख की निशानी में
एक बार आह कर काल था तड़प जाता
जब चलता था लहरा कर जवानी में !!

कायरपना ही में व्यतीत किया जीवन क्या
जिससे कि वीरों का स्वभाव नहीं जाना था,
मरद रहा तो मरदानगी दिखाना रहा
पूँछ उठा मेरी ललकार के जगाना था,
नहीं तो वहीं पै प्राण छोड़ देता, छोड़ देता
ऐसा कुछ साधना ही शर का निशाना था,
किन्तु यों स्वतन्त्रता छुड़ा के यों अभागा बना
परतन्त्रता के पिंजरे में नहीं लाना था !!

काल सी कराल मेरी आंखे जिस पर झुकीं
मांगा हाथ जोड़ उसने ही प्राण वर दो,
व्याध ! तुमने तो कायरों सा लुक छिप कर
हो कर के क्रूर हा ! चला ही दिया शर दो,
खून खींच लेता मैं तुम्हारा खट मेरे साथ
यदि डट जाते तुम क्षण, गन कर, दो,
तर कर दूं मैं अभी खून से तुम्हारे जमीं
वाहर शिकारी ! यदि एक बार कर दो !!

चुप हो शिकारी ने दिखाई डांट और कहा
गाओ मत गाथा तुम अपनी पड़े रहो,
याद भली अपने पुराने वीर-जीवन की
लेकर के इस जिन्दगी में न अड़े रहो !

मिल न सकेगी यों स्वतन्त्रता कभी भी तुम्हें
शासित हो रहो चाहे हीरक-जड़े रहो,
बोलो मत परतन्त्रता के पुण्य पिंजर में
खाओ पीओ मौज से सुमौन हो पड़े रहो !!

खौल उठा खून सुनते ही सिंह बोल उठा
आके सामने तूं वारा न्यारा कर लेगा क्या,
क़सम तुझे है पड़ सामने तो देख लूं मैं
तूं ले महाशक्तिका सहारा कर लेगा क्या !

वार करने ही पै तुले जो गजराज मत्त
स्यारोंका समाज फिर सारा कर लेगा क्या,
जान ले लूँ यदि बिजली सा मैं तड़प कर
वधिक विचारा तूं हमारा कर लेगा क्या !!

सुन कर मेरा भीम-नाद तेरी क्या तो कहूँ
काँप काँप जाती है मही भी महावन की,
राह देता वायु भी सिहर के विलोक मुझे
सुध भूलती हैं गजों को तन मन को !
आज मुझको तू बना कैदी शान गांठता है
भूला हुआ किस भूलमें है अरे सनकी,
इस पिंजरे के तोड़ने में क्या रखा है मुझे,
तोड़ता क्षणोंमें मैं शिला करोड़ मन की !!

जिन कड़ियों को तूं समझता कड़ी से कड़ी
जानता उन्हें हूं मैं तो फूल ही की लड़ियां,
अट्टहास अपना मचा दूं यदि एक बार
टूट जायें तेरी एक-एक अनतड़ियां !
ऐसा कह ताव में आ तड़पा वहीं पै तेज
तोड़ दिया तड़ से लचीली लोह-छड़ियां,
वधिक गरूरी मरा, सिंह भी स्वतन्त्र हुआ,
पूरी हुई यों ही परतन्त्रता की घड़ियां !!

उपसंहारः ।

चञ्चन्मूलनिकृन्तनैकरसिको गीर्वाणवाणीद्रुहां
योऽद्यत्वे प्रतिभट्टहेमनिकषग्रावायितस्सर्वथा ।
आधारः स न एकलः कविकलावाल्लभ्यभाक् 'श्रीमहा-
देवश्शास्त्रिवरो' गुरोरपि गुरुः पायादपायात्सदा ॥

श्रीकाशीश्वरविश्वनाथपदपद्मोद्यन्मधूलीलवं
गङ्गात्तुङ्गतरङ्गविभ्रमभरं शुश्रूषते याऽनिशम् ।
साऽऽचारप्रवणा पुराणकथितालापैर्नयन्ती क्षणान्
मान्या सूर्यपुरेश्वरी मतिमती मातेव मे 'मैथिली' ॥

लक्ष्मीः स्वस्तिमती, पति-प्रियतमा, पुत्राऽन्विता, धीमती
कान्तिर्मूर्तिमती, पवित्रचरिता, चीर्णव्रता, दक्षिणा ।
सौभाग्याञ्चितधर्मकल्पकलिका पुष्णाति नक्तन्दिवं
सा मामात्मजनिर्विशेषममला लालालयन्ती सती ॥

आज्ञां प्राप्य ततोऽथ हिन्दुजनताजीवातुभूतं नवं
काव्यं भव्यतमं विलिख्य कुतुकाद् हिन्दीगिरो गौरवम् ।
लीलानन्दवनैकनन्दनपदद्वन्द्वं स्मरन् हार्दिकं—
हर्षं विन्दति कोऽपि 'माधव'-वचःपीयूषपानप्रियः ॥

संस्कृत-साहित्य के युगान्तरकारी क्रान्तिदर्शी कवि 'अंश'जी की नई रचना !

संस्कृत-भाषाका सर्वश्रेष्ठ वीररसावतार काव्य !!

'प्रताप-विजयः'

समस्त भारत के प्रगतिशील संस्कृत-साहित्यिक-समाज में जहां देखिये वहीं इस काव्यकी चर्चा सुनाई देती है ! इस के छपते ही, विभिन्न अखिल-भारतीय सभा-समाजों, विद्वानों, नेताओं के द्वारा कविके पास पुरस्कारों, बधाइयों, धन्यवादों की झड़ियां लग गई हैं ! एक-एक पद्यमें विश्वविश्रुत वीरव्रती राणाका रण-गर्जन हुङ्कार कर रहा है ! श्लोकों के पढ़ते समय तलवारों की झनझनाहट सी सुनाई देने लगती है ? परतन्त्र भारतके आक्रोश भरे भावों के मार्मिक-चित्रण में संस्कृतभाषा का यह एकमात्र सफल, अनवद्य, आधुनिकतम काव्य-ग्रन्थ है !

दर्जनों दिग्गज विद्वानों की प्रशंसात्मक सम्मतियां ! राणा प्रताप का फड़कता हुआ चित्र !!

चमचमाते हुए चिकने उज्ज्वल कागज पर मोती जैसे मनमोहक टाइप !!

केवल आठ आने में एक प्रति लेकर इस वीर-काव्य का अनूठा आनन्द लीजिये !

व्यवस्थापक,

'ज्योतिष्मती'—कार्यालय, काशी ।